भूमिका

1.

कला और शिल्प की धरोहरें उत्तराखंड में जगह-जगह मौजूद हैं. घरों से मंदिरों तक और वस्त्रों से सामाजिक संस्कारों तक. तरफ ऐपण जैसी सांस्कृतिक कला है तो दूसरी तरफ स्थापत्य में काठ के दरवाजों-खिडकियों पर उत्कीर्ण किये हुए विन्यास और कृषि और फसलों से जुडी हुई वस्तुओं और उपकरणों की बुनावट. विभिन्न समुदायों और जनजातियों के बीच उपजी पहाड़ की कला अलग से कोई गतिविधि नहीं थी, बल्कि समाज की जीवन -शैली और रहन-सहन का एक अभिन्न हिस्सा थी. सांस लेने, भोजन करने और खेती करने की ही तरह. यह लोगों का रोज़गार भी था और कला और रोज़गार कोई अलग-अलग काम नहीं थे. इस कला की पहचान भी टुकड़ों-टुकड़ों में नहीं, बल्कि समग्रता में, जीवन की एकीकृत इकाई के रूप में ही संभव है. उदहारण के लिए, नेपाल और तिब्बत के सीमांतों में निवास करने वाले समुदाय कलात्मक ऊनी वस्त्रों के हुनर के लिए विख्यात रहे हैं, लेकिन वे लोगों को कड़े शीत से बचाने का काम करते थे और कला का हिस्सा भी थे. यह दूसरी बात है उत्तराखंड में कला, शिल्प और वास्तु की उत्कृष्ट विरासत को संग्रहीत और संरक्षित करने के प्रयास बहुत कम हुए और वह अपनी क्षेत्रीय परिधियों में ही सीमित रही. या बहुत विक्सित नहीं हो पायी. इन सभी कला रूपों में एक गहरी सामूहिकता थी जो लोक जीवन के व्यवहार की सबसे बड़ी विशेषता मानी जाती है.

इस कला में बहुत विविधता थी. केदारनाथ, बद्रीनाथ, गंगोत्री, जागेश्वर, बागेश्वर जैसे कई मंदिरों की वास्तुकला हो या लोक जीवन में देवी-देवताओं की प्रतिमाओं और आवासों का न्यूनतावादी शिल्प, उत्तराखंड की कला विलक्षण मानी जाती रही है. घरों के निर्माण के स्थापत्य में भी यह क्षेत्र अग्रणी रहा. ऊंची, कई मंजिल की तेबारियां, उनके काठ के दरवाजों-खिड़कियों पर उकेरनें, और पैटर्न और चटख रंग उन्हें आवासीय वास्तुशिल्प की परम्परा में एक अनोखी जगह देते हैं. यह कला हर अंचल में अलग किस्म की थी और वास्तु की स्तरीयता और विविधता को अभिव्यक्त करती थी. आज जबकि एक मैदानी और सपाट किस्म के गृह-शिल्प (हालाँकि उसे शिल्प भी नहीं कहा जा सकता) ने शहरों ही नहीं, गाँव तक में घुसपैठ कर ली है, कहीं-कहीं और खास तौर पर आदिम जाति वाले अंचलों में, जनांतिक समुदायों में वे पुराने तीन मंजिल तक के घर बचे हुए हैं, जिनमें लकड़ी पर उकेरन, पच्चीकारी और रिलीफ का सूक्ष्म काम दिखाई दे जाता है. सीमांत क्षेत्रों में ऊनी और रेशमी कपड़ों की कलात्मक पैटर्नों से भरपूर बुनावट भी कला का बेजोड़ उदाहरण है. वस्त्रों के ये पैटर्न उत्तराखंडी जातीय समाज की विशिष्ट देन हैं

और दूसरे राज्यों में नहीं मिलते. पीतल के उपकरणों, हुक्कों और दूसरी घरेलू चीज़ों पर विभिन्न विन्यास उकेरने की कला भी इस गतिविधि का एक और आयाम है.

इस कला-परंपरा के संग्रहण और संरक्षण की ज़रुरत निर्विवाद है. और इसी के साथ उस आधुनिक कला को भी भरपूर पोषण देने की ज़रुरत है जिसका आरम्भ प्रसिद्द चित्रकार, कवि और इतिहासकार मोला राम (1743-1833) से माना जाता है और जिन्हें गढ़वाल कलम को जन्म देने का श्रेय है. मोला राम ने उस समय की सबसे अधिक प्रचलित मुगल मिनियेचर शैली के प्रभाव में शुरुआत की थी, लेकिन उन्होंने अपना एक अलग मुहावरा भी विकसित किया जिसमें श्रीनगर का भूदृश्य जैसी कृतियाँ उल्लेखनीय हैं. उनकी कुछ कृतियाँ ब्रिटेन, अमेरिका के बोस्टन, भारत कला भवन आदि जगहों में मौजूद हैं और कुछ गढ़वाल में श्रीनगर स्थित हेमवती नंदन बहुगुणा विश्वविद्यालय में हैं, लेकिन वहाँ उनका कोई स्वतंत्र संग्रहालय नहीं बन सका. आजादी के बाद पहाड़ों से हुए व्यापक विस्थापन और प्रवास के कारण यहाँ की कला प्रतिभाएं मैदानी शहरों की ओर गयीं जहां उन्होंने अपनी उल्लेखनीय पहचान बनायी, लेकिन पहाड़ को उनकी रचनात्मकता का लाभ बहुत कम मिल पाया.

'उत्तरा समकालीन कला संग्रहालय' उत्तराखंड की आधुनिक और समकालीन कला गतिविधि को रेखांकित करने, उस एक स्थल और एक बिंदु पर एकत्र करने और मौजूदा और आगामी कला का घर बनाने की दिशा में एक पहल है. यहाँ राष्ट्रीय स्तर पर प्रतिष्ठित कलाकार सुरेंद्र पाल जोशी के स्थायी कला संगह के साथ-साथ कला प्रदर्शनियों के लिए एक मुक्त जगह मुकम्मिल की गयी है जहाँ उत्तराखंड के कलाकार और शिल्पी अपने नए-पुराने काम को प्रदर्शित कर सकेंगे और कला की दुनिया में हिमालय अंचल का प्रतिमान बनने वाली मोला राम की परंपरा को आधुनिक और उत्तर-आधुनिक विस्तारों तक ले जा सकेंगे.

'उत्तरा' में प्रदर्शित सुरेंद्र पाल जोशी की कला बहुआयामी है. उसमें पेंटिंग, रेखांकन, शिल्प, फोटोकारी, इंस्टालेशन और वीडियो भी शामिल किये गए हैं. अर्थात यह प्रदर्शनी कला के अनुभव को एक समग्रता में प्रस्तुत करती है और उसके प्रयोजन में भी कई पहलू निहित हैं. वह दर्शक को एक सौंदर्य से रूबरू कराती है और उस यथार्थ को भी व्यक्त करती चलती है जो इनमें से ज़्यादातर कृतियों की रचना का मुख्या स्रोत रहा है. सन 2013 में उत्तराखंड के केदारनाथ और गंगोत्री क्षेत्रों में आयी भीषण बाढ़ से विचलित सुरेंद्र जोशी ने उन इलाकों की यात्रा की जो इस विभीषिका से प्रभावित हुए थे और उन्होंने

कुछ अनुभव किया उसे रेखाओं-रंगों और आकृतियों के रूप में दर्ज करते रहे. यह यात्रा एक तरह से बाढ़-प्रभावित अंचलों की ही नहीं, बल्कि पूरे उत्तराखंड और उसके जन-जीवन की अंतर्यात्रा बन गयी, जिसका नतीजा 'उत्तरा' में प्रदर्शित कृतियाँ हैं. उनमे विध्वंसकारी पानी की स्मृति तो है ही, आपदाओं से संघर्ष करने वाले पहाड़ी जनों की जिजीविषा और जीवन से जुड़े बिम्ब भी है और वह प्रकृति भी, जिससे लोग सुन्दरता और साहस दोनों को प्राप्त करते हैं.

चित्रकला में राष्ट्रीय पुरस्कार से सम्मानित सुरेंद्र जोशी का जन्म देहरादून में हुआ. कला का अध्ययन करने के लिए वे लखनऊ के कला महाविद्यालय में गए और फिर जयपुर में कला महाविद्यालय में अध्यापन करने लगे. वे आधुनिक भारतीय कला के एक सशक्त हस्ताक्षर हैं और जयपुर में निवास करते हुए भी अपनी जन्म्भूमि से गहरे जुड़े हैं. उनकी रचनात्मक यात्रा की शुरुआत आकृतिमूलक चित्रों से हुई थी और एक लंबी साधना के बाद उनके कैनवस अमूर्त मुहावरे में ढलते गए है, लेकिन इस अमूर्तन के पीछे मूर्त आकारों और उनकी छायाओं को बखूबी पहचाना जा सकता है. सुरेंद्र के अमूर्त कैनवस की बुनावट में वह ताना-बाना भी दिखता है जो उन्होंने अपने बचपन में कपडे बुने जाते समय देखा था. घर में काम आने वाले धागे, तांबे के पुराने सिक्के, जहां-तहां पड़े हुए तार, काठ के टूटे हुए पहिये, पशुओं के गले में बांधी जाने वाली रस्सियाँ जैसी चीज़ें उनकी कला में जैसे स्मृति के बिंब बन कर आती हैं, सुंदर संयोजनों को निर्मित करती हैं और उनके पीछे सधे हुए रेखांकनों की बुनियाद रहती है. सुरेंद्र को रंगों और उनकी विभिन्न रंगतों और आभासों पर महारत हासिल है, जिसका बहुत आकर्षक और रचनात्मक उपयोग उन्होंने अपनी कला में किया है. इस प्रदर्शनी की कृतियों में रंगों पर उनका यह अधिकार भी देखने लायक है.

इनमें से कई कृतियाँ उत्तराखंड की बाढ़ त्रासदी पर केंद्रित हैं और उनमें हिमालय के दृश्य जिस तरह चित्रित हुए हैं वैसे शायद पहले कभी नहीं हुए. हिमालय के चित्रण में उन्नीसवीं सदी में जन्मे रूसी चित्रकार निकोलाई रेरिक का नाम सबसे पहले आता है, लेकिन सुरेंद्र का हिमालय एक अलग कहानी कहता लगता है. रेरिक की कृतियों में हिमालय शांत-मनोरम, भव्य और किसी तपस्या में निमग्न जान पड़ता है, लेकिन ससुरेंद्र उसे यथार्थपरक चित्रण से दूर किसी दूसरे वातावरण में इस तरह ले जाते हैं कि दर्शक के लिए उसका आभास बचा रहे, लेकिन वह एक स्वतंत्र अनुभव भी बन सके. आधुनिक कला उन कयाकल्पों से संभव होती है जिनमें एक यथार्थ अपनी यथातथ्यता से कुछ अलग होकर एक दूसरे यथार्थ की तामीर करता है. सुरेन्द्र के रेखांकनों में भी यह विशेषता है. वे 'ऑन-द-स्पॉट' और यथार्थपरक ढंग से किये गए लगते हैं, लेकिन उनके संयोजन का तरीका और रंगों की परत उन्हें स्वतंत्र काम का दर्ज़ा देते हैं. कला में और खासकर रेखांकन करते हुए कलाकार के लिए यह जानना ज़रूरी होता है कि किसी दृश्य

में से क्या चित्रित किया जाना चाहिए और क्या नहीं. सुरेंद्र ने इस चयन को ध्यान में रखते हुए अपने रेखांकन इस तरह संयोजित किये हैं कि वे आरेखनों से ऊपर उठकर पेंटिंग के स्तर पर पंहुच जाते हैं.

हाल के वर्षों में सुरेंद्र जोशी ने इंस्टालेशन विधा में कई नए और दिलचस्प प्रयोग किये हैं. हज़ारों आलपिनों से बनाया हुआ उनका एक हेलमेट पिछले दिनों बहुत चर्चित हुआ. नए माध्यम और नयी संरचना के साथ-साथ उस पर रौशनी और संगीत की व्यवस्था भी थी जिसके कारण वह एक अलग पहचान वाली प्रभावशाली कृति बन गया. आलपिनों के ज़रिये पानी को अभिव्यक्त करता हुआ एक और इंस्टालेशन भी उल्लेखनीय है. 'उत्तरा' में इसी शैली पर उन्होंने ढोल-दमाऊ (या नगाड़ा) और 'घिल्डा' की संरचना की है जो पूरी प्रदर्शनी को बहुत सार्थक आयाम देती है. ये दोनों वस्तुएं पहाड़ के जीवन का ज़रूरी अंग हैं. ढोल-नगाड़ा लगभग सभी संस्कारों-अनुष्ठानों में–जन्म, नामकरण, सगाई, विवाह, बारात, जात्रा, पूजा, मेले, आदि के समय–बजाया जाता है और पहाड़ में उसकी मौजूदगी विशाल और व्यापक है. उसे बजाने की अनूठी कला ज़्यादातर दलित जातियों के पास रही है. घिल्डा पहाड़ की महिलाओं का स्थायी साथी है. वे खेतों से फसल, जंगल से घास और अन्य कई सामान लाने के लिए इसका इस्तेमाल करती हैं. सुरेंद्र की कला-दृष्टि ने इन दो उपकरणों को पहाडी जीवन के रूपकों में बदल दिया है. इसी तरह, उत्तराखंड के लकड़ी के घर की अनुकृति भी प्रदर्शित है. यह कला अब विलुप्ति के कगार पर है, लेकिन प्रदर्शनी में उसकी उपस्थिति एक स्मृति और एक रूपक का काम करती है. कुल मिलाकर ये तीनों वस्तुएं उत्तराखंड के सबसे सशक्त और मुखर बिंब हैं.

'उत्तरा समकालीन कला संग्रहालय' भी कला का एक रूपक और एक बिंब है जो उत्तराखंड में पहली बार अस्तित्व में आया है. हमारे समय के कलाकार उसे निश्चय ही सार्थक ऊंचाइयों तक ले जायेंगे.

-मंगलेश डबराल

नयी दिल्ली, फरवरी 2017